[डा० केसकर]
करें कि वे अपना नियंत्रण रखना चाहते हैं या नहीं ।

अन्त में मैं यह बता देना चाहता हूं कि इस पर इस समय इतना अधिक धन इसलिये व्यय किया जा रहा है कि जिस से कि इस की गणना संसार की बड़ी से बड़ी संस्थाओं में होने लगे । इस पंच वर्षीय योजना में हम लगभग चार करोड़ रुपया प्रसारण के विकास पर व्यय कर रहे हैं, तथा द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस से भी अधिक धन व्यय किया जायेगा । जब सरकार इतना धन इस पर व्यय कर रही है तो क्या यह उपयुक्त होगा कि संसद् का विभिन्न समितियों का तथा वित्त मंत्रालय का नियंत्रण उस पर से उठा लिया जाये तथा इस को एक निगम को सौंप दिया जाये । आप ही स्वयं कुछ निगमों के विरुद्ध शिकायतें करते हैं तथा अब आप ही निगम बनाने की बात कहते हैं ।

मुझे खेद है कि समय की कमी के कारण माननीय सदस्यों के कुछ आक्षेपों का उत्तर मैं अभी नहीं दे सकता हूं । परन्तु आय-व्ययक सम्बन्धी चर्चा के समय मैं उन का उत्तर दूंगा । परन्तु मैं बता देना चाहता हूं कि मैं संकल्प तथा संशोधनों किसी को भी स्वीकार नहीं करूंगा ।

**अध्यक्ष महोदय** : माननीय मंत्री यदि और कुछ कहना चाहते हैं तो कह सकते हैं हम इस वाद-विवाद को बन्द कर देंगे ।

**डा० केसकर** : यह चर्चा अब बन्द कर दी जानी चाहिये । आय-व्ययक सम्बन्धी चर्चा के समय आकाशवाणी पर फिर वाद-विवाद होगा ।

**अध्यक्ष महोदय** : संकल्प के प्रस्तुत-कर्ता ठाकुर युगल किशोर सिंह उत्तर देना चाहते हैं इसलिये इसे दूसरे दिन तक के लिये स्थगित करना आवश्यक है ।

## राष्ट्रपति के अभिभाषण के सम्बन्ध में प्रस्ताव—समाप्त

**प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरु)** : श्रीमान्, पिछले दो दिनों से हम इस सभा में राष्ट्रपति के अभिभाषण पर चर्चा कर रहे हैं । सरकारी नीति की प्रशंसा में और उस की आलोचना में भी, बहुत कुछ कहा गया है । उस प्रशंसा के लिये मैं आभारी हूं, साथ ही उन आलोचनाओं के लिये भी, यद्यपि उन में से अधिकतर आलोचनाओं से मैं सहमत नहीं हूं, मैं अपना आभार प्रकट करता हूं

मुझे आशंका है कि सभा अपनी उमंग में यह कल्पना न कर ले कि हम जो कुछ कह रहे हैं उस से बहुत अधिक हम कर रहे हैं । मेरा निर्देश विशेषत: अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र से है क्योंकि कुछ माननीय सदस्यों ने यह कहा है कि कुछ विश्व समस्याओं के सम्बन्ध में भारत अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है जो एक प्रकार से प्रभुत्वपूर्ण है । जो भी हो, हमें अधिक उपयुक्त दृष्टिकोण रखना चाहिये ।

मेरा विश्वास है कि हम ने कतिपय समस्याओं को हल करने के सम्बन्ध में अथवा तनातनी कम करने के सम्बन्ध में समय समय पर सहायता की है और उस के लिये हमें उचित श्रेय लेना चाहिये । किन्तु हम उस से और आगे न बढ़ें । किसी भी देश की घटनाओं पर प्रभाव डालने की सामर्थ्य अनेक तथ्यों द्वारा सीमित होती है । वास्तव में देखा जाय तो आप को मालूम होगा कि भारत में उन अधिकतर बातों की कमी है और यदि हम किसी प्रकार विदेशी घटनाओं को प्रभावित कर सके हैं तो वह किसी सैनिक अथवा वित्तीय शक्ति के कारण नहीं बल्कि इसलिये कि दूसरों की अपेक्षा हम ने घटनाओं को अधिक

उचित रूप से समझा है क्योंकि हम युगधर्म के अधिक अनुरूप थे और इसीलिये हम उन चीजों को ठीक तौर से समझ सके, इसलिये नहीं कि हम में अधिक ताक़त या शक्ति थी। अतः सभा से मेरी प्रार्थना है कि वह इस दृष्टिकोण से देखे। मेरी धारणा है कि जहां तक अन्तर्राष्ट्रीय नीति का सम्बन्ध है, सही हो या गलत उस का कहीं न कहीं महत्व होता है। किन्तु किसी प्रस्थापना के सही होने की ओर ध्यान नहीं दिया जाता है वरन् उसे कहने वाले व्यक्ति अथवा देश की ओर और उस देश के पीछे की शक्ति की ओर ध्यान दिया जाता है। कोई भी अन्तर्राष्ट्रीय नीति अंततोगत्वा उस देश के घरेलू मामलों पर निर्भर होती है। वास्तव में उसे एक दूसरे के अनुरूप होना पड़ता है क्योंकि वह एक दूसरे से अलग नहीं हो सकती है। अन्तिम विश्लेषण में घरेलू मामलों के आधार पर ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बोलने के लिये कुछ शक्ति, बल और प्राधिकार प्राप्त होता है। मैं उत्तेजनापूर्ण तुलनायें नहीं करना चाहता हूं, किन्तु माननीय सदस्य आज के भारत की अन्य देशों के साथ तुलना कर के स्वतः यह निर्णय करें कि अधिकतर देशों की अपेक्षा किस हद तक भारत ने पिछले छः या सात वर्षों में प्रगति नहीं की है। वास्तव में इसी धारणा के कारण ही भारत आगे बढ़ रहा है और बाक़ी दुनिया के लोग उस की ओर आदर की दृष्टि से देखते हैं। भारत एक ऐसा देश है जो पूर्णतः दृढ़ और गतिशील है।

अनेक माननीय सदस्यों ने यह आरोप लगाया है कि राष्ट्रपति के अभिभाषण में अमुक अमुक विषय का उल्लेख नहीं किया गया है। मैं ने अनेक बार यह बताने का प्रयत्न किया है कि राष्ट्रपति का अभिभाषण हमारे लिये कार्यों की अथवा भविष्य में किये जाने वाले कार्यों की एक लम्बी सूची नहीं होती है। वह हमारे सभी विभागों अथवा मंत्रालयों के कार्यों का पुनर्विलोकन नहीं होती है। उस में अभिसमय के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के साथ तथा अन्य देशों के साथ भारत के सम्बन्ध का और मोटे तौर पर घरेलू मामलों का संक्षिप्त विवेचन किया जाता है।

दूसरी ओर के माननीय सदस्य ने कहा था कि राष्ट्रपति को सेना, नौसेना तथा वायु बल के बारे में अधिक कहना चाहिये था। मैं इस बात को नहीं समझ पाता हूं। यह बात नहीं है कि उन का कोई महत्व नहीं है बल्कि हमें उन पर उचित समय में उचित अवसर पर विवेचन करना चाहिये। राष्ट्रपति उस सम्बन्ध में अथवा भारतीय प्रशासन सेवा या अन्य किसी सेवा के सम्बन्ध में क्यों चर्चा करें? अतः मेरा सभा से यह निवेदन है कि वह किसी निश्चित दृष्टिकोण से चीजों को देखें। अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के सम्बन्ध में आज की अनेक कठिनाइयां इसी कारण हैं कि लोगों का कोई निश्चित दृष्टिकोण नहीं है अथवा वे उन परिवर्तनों के प्रति जागरूक नहीं हैं जो आज दुनिया में होने जा रहे हैं अथवा हो चुके हैं। हम फिलहाल एक असाधारण क्रान्तिकारी युग में हैं और वह भी सच्चे अर्थ में क्योंकि प्रत्येक वस्तु संक्रमण की अवस्था में है और बड़ी तेज़ी से बदल रही है। ऐसा क्यों है, यह एक भिन्न विषय है।

आप कह सकते हैं कि वह औद्योगिक क्रान्ति की पराकाष्ठा है जिस का वर्तमान प्रतीक परमाणु अथवा उद्जन बम कहा जा सकता है, क्योंकि वह औद्योगिक क्रान्ति विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास का परिणाम है। विश्व में घटित अन्य सभी बातें २०० वर्ष या उस से कुछ कम समय पहले प्रारम्भ हुए औद्योगिक क्रान्ति के

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

परिणाम हैं। हम इस दशा तक पहुंच चुके हैं और आज के युग का प्रतीक उद्जन बम है। हम उसे भयंकर विनाश के रूप में देखते हैं, किन्तु वह उस से कुछ और अधिक भी है; वह औद्योगिक क्रान्ति के प्रारम्भ से विश्व के पास एकत्र महान् शक्ति का प्रतीक है। हमारे समक्ष और अधिक परिमाण की एक दूसरी क्रान्ति उपस्थित है जहां शक्ति को मुक्त किया जा रहा है। उस शक्ति से मानवता नष्ट होगी या बची रहेगी यह एक दूसरी बात है। जब तक किसी को इस स्थिति की स्पष्ट कल्पना नहीं होगी वह अन्य समस्याओं को नहीं तौल सकता है क्योंकि वे इस स्थिति से सम्बन्धित है।

आज की विश्वस्थिति का और दूसरा पहलू लीजिये। आज खास कर एशिया में और कुछ कम हद तक अफ्रीका में क्या हो रहा है। अफ्रीका में एक उत्तेजना है, एशिया में उस से कुछ और अधिक है। सारी स्थिति बदल गई है और बदल रही है और क्रांतियां हुई हैं। हमारे युग की प्रमुख बातों में एक एशिया का उत्थान है और यह बात बिलकुल अलग है कि लोग उसे पसन्द करते हैं या नहीं। दुर्भाग्यवश लोग तथ्य को स्वीकार नहीं करते हैं। यह एक कठोर सत्य है कि चीन में जनता की सरकार है किन्तु कुछ देश उसे स्वीकार नहीं करते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमरीका फार-मोसा द्वीप को ही चीन कहता है। यह एक असाधारण बात है। ऐसे तथ्य को जान बूझ कर एक ओर रख कर बनाई गई नीति किस प्रकार ठीक नीति हो सकती है? इस के अतिरिक्त दूसरी बात जो मैं बताने का प्रयत्न कर रहा था वह यह है कि एशिया एक महान् क्रान्तिकारी परिवर्तन और संक्रमण के पथ पर है। यह संक्रमण और परिवर्तन भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न स्वरूप ले सकता है। फिर भी आप देखेंगे कि बड़े देश इस बात को जानते हुए भी कि राजनीतिक परिवर्तन हो रहे हैं उन्हें मानने के लिये तय्यार नहीं हैं और यह सोचते हैं कि एशिया सम्बन्धी समस्याओं और मामलों में अभी पुराने तरीक़े अपनाये जा सकते हैं। मेरा यह आशय नहीं है कि एशिया किसी अन्य महाद्वीप के विरुद्ध खड़ा हो जाय।

मैं यह बताने का प्रयत्न कर रहा था कि समस्या को सुलझाने के लिये सर्वप्रथम आवश्यक यह है कि समस्या की प्रकृति को समझा जाय। मेरा यह कहना है कि समस्या को समझने के लिये पर्याप्त प्रयत्न नहीं किया जा रहा है। आज एशिया में जो कुछ हो रहा है वह सब से अधिक दिलचस्पी का विषय है। इतिहास के किसी भी छात्र को अथवा किसी व्यक्ति को जो किसी एक दृष्टिकोण से इतिहास की ओर देखना चाहते हैं उन के लिये यह सब से अधिक दिलचस्पी का विषय होगा। फिर भी मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि अफ्रीका के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जाता है और अब भी किया जा रहा है। मैं जो कहना चाहता हूं वह यह है कि पुरानी आदतों अथवा वर्तमान हित के कारण लोग स्थिति को वास्तविक रूप में देखने में असमर्थ हैं। हमें भौगोलिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक आदि उन असंख्य शक्तियों को समझना है। ये सभी आज के विश्व में क्रियाशील हैं और आज तो आप आणुविक शक्तियों को वर्तमान युग का प्रतीक समझ सकते हैं।

इस नये संदर्भ में समस्या को समझने का प्रयत्न करने से अनेक परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। एक तो यह कि हमारी पहले की सारी विचारधारा पुरानी हो सकती है। हमारे सभी नारे निरर्थक हो सकते हैं।

अतः चाहे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हो अथवा घरेलू क्षेत्र में हमें वर्तमान स्थिति को नये सिरे से समझना होगा ।

इस सन्दर्भ में समस्याओं के अन्तर्राष्ट्रीय पहलुओं तथा अपनी घरेलू समस्याओं के बारे में कुछ शब्द कहना चाहता हूं । आज सब से महत्वपूर्ण तथा गंभीर प्रश्न फ़ारमोसा तथा चीन के तटवर्ती द्वीपों सम्बन्धी स्थिति है । राष्ट्रपति ने उस का निर्देश करते हुए कहा है कि हम चीन में केवल जनता की सरकार को मानते हैं और हमारे विचार से चीन के दावे न्यायोचित हैं । कुछ माननी सदस्यों ने उस वक्तव्य की आलोचना की है । मैं उस प्रश्न के कुछ पहलुओं पर विचार करना चाहता हूं ।

सर्वप्रथम यह निश्चित है कि हम दो चीन की स्वीकार नहीं कर सकते हैं और इसलिये हम ने जान बूझ कर केवल एक चीन को ही माना है क्योंकि वही वास्तविक चीन है । यह स्पष्ट है कि फ़ारमोसा चीन नहीं है । अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि हम अथवा राष्ट्रपति यह क्यों कहें कि चीन के दावे न्यायोचित प्रतीत होते हैं । मैं पुराने इतिहास की चर्चा नहीं करूंगा क्योंकि सैकड़ों वर्ष तक फ़ारमोसा चीन का अंग रहा है सिवा इस के कि ५० वर्ष की कुछ कम अवधि से वह उस का अंग नहीं रहा है । चीन ने सदा उसे अपना ही भाग समझा है और इसलिये उस का उस पर दावा है । चीन का यह राष्ट्रीय दावा है ।

किन्तु इस के अतिरिक्त, क़ाहिरा और पोट्स्डम में यह स्पष्ट बताया गया था कि फ़ारमोसा चीन को मिलना चाहिये । यह सच है कि उस समय चीन एक ऐसी सरकार द्वारा शासित नहीं था जो प्रधानतया कम्यूनिस्ट हो । बाद में जापानी आत्मसमर्पण की शर्तों में भी यही कहा गया था । जहां तक मुझे स्मरण है, सानफ्रांसिस्को संधि में भी इसी प्रकार का निर्देश किया गया था । अतः किसी समय भी इस तथ्य पर सन्देह प्रकट नहीं किया गया कि फ़ारमोसा चीनी राज्य का एक भाग है । अब पिछले दो तीन वर्षों में ऐसी क्या बात हुई है कि स्थिति को बदल दिया जाय ? मुझे ऐसी कोई बात ज्ञात नहीं है बशर्ते कि कोई यह कहे कि वह वर्तमान चीनी राज्य को नहीं पसन्द करता है । यह कोई तर्क नहीं है ।

अतः इस से यह निष्कर्ष निकलता है कि उस देश के लिये जो चीन की वर्तमान सरकार को स्वीकार करता है, फ़ारमोसा उस राज्य का भाग है । अभी फिलहाल वह मार्शल च्यांग काई शेक के कब्जे में है जिसे एक महान् शक्ति का समर्थन प्राप्त है । आज वास्तव में स्थिति यह है ।

मैं इस विषय पर अधिक तर्क न करते हुए केवल इस बात पर ज़ोर देता हूं कि चाहे जो कुछ भी किया जाय, फिर भी शान्तिपूर्वक समझौता करने का प्रयत्न किया जाना चाहिये । उस में कुछ थोड़ा समय लग सकता है लेकिन वह कहीं अधिक अच्छा है इस की अपेक्षा कि एक लम्बी लड़ाई हो और दुनिया के एक बड़े हिस्से की बरबादी हो ।

पश्चिम के कुछ देशों में इन विषयों के बारे में एक विचित्र मतभेद है । शायद ही ऐसा कोई देश हो जो यह न मानता हो कि तटीय द्वीप विशेष कर क्यूमोय और मात्सू निश्चय ही चीन के भाग हैं । वे किनारे से पांच या दस मील की दूरी पर हैं और कोई देश यह बर्दाश्त नहीं कर सकता है कि उस का शत्रु उस के किनारे से दस मील की दूरी पर बैठा रहे और हमेशा उस पर बमबारी करता रहे । यह एक असह्य स्थिति है । अतः यह बात सभी लोग स्वीकार करते हैं कि उन द्वीपों को तुरन्त खाली कर दिया

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

जाय और मुख्य द्वीप उन पर कब्जा कर ले। पर ऐसा नहीं किया गया और मुझे यह नहीं मालूम कि क्या ऐसा किया भी जा सकेगा? हमें यह सोच लेना चाहिये था क्या किसी भी परिस्थिति में हमें ऐसा करना चाहिये क्योंकि इस प्रकार के कार्य का कोई औचित्य नहीं है। उस के बाद फारमोसा और पेस्काडोर के मामले पर विचार किया जा सकता है।

आज केवल फारमोसा के सम्बन्ध में ही यह कठिनाई नहीं है बल्कि संसार की बहुत सी समस्याओं के सम्बन्ध में यह कठिनाई है और संसार की नित्य की घटनाओं और हमारे दृष्टिकोणों में काफी अन्तर है।

मैं सभा के सम्मुख एक दूसरा दृष्टिकोण पेश करता हूं। आज हम चारों तरफ सैनिक सन्धियों की बात सुनते हैं। आज संसार में दो महान् शक्तियां संयुक्त राज्य अमरीका और रूस हैं। महान् और बड़ी शक्तियों के बीच सैनिक सन्धि का कुछ महत्व होता है पर एक महान शक्तिशाली और एक बहुत छोटे देश के बीच सैनिक सन्धि का कोई महत्व नहीं है, आज के अणुशक्ति-युग में उन्हीं देशों का महत्व है जो अणु बमों का प्रयोग कर सकते हैं। पर छोटे देशों का बड़े देशों के साथ सैनिक सन्धि करने का अर्थ यही है कि वह दूसरे देशों के परतंत्र होते जा रहे हैं। इस से सैनिक महत्व से रक्षा की कोई अभिवृद्धि नहीं होती। हो सकता है कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उस का कुछ महत्व हो। मैं ऐसी कोई बात नहीं कहना चाहता जिससे कोई एक देश दूसरे के विरुद्ध सैनिक तैयार करे। पर यह बात दोनों पक्षों पर लागू होती है। आज के अणुशक्ति युग में युद्ध की बात सोचना ही पागलपन है। आज किसी एक व्यक्ति ने चाहे युद्ध की बात सोची हो, पर इंगलैंड अमरीका और रूस के बड़े बड़े सेनापतियों ने कहा है कि आज युद्ध की बात नहीं सोची जा सकती, क्योंकि युद्ध का उद्देश्य कुछ प्राप्त करना होता है न कि बरबादी करना। आज अगर युद्ध होगा तो एक देश ही नहीं बल्कि सभी देश जो उस में भाग लेंगे, बरबाद हो जायेंगे। संसार के सभी देश यह समझते हैं कि आज के अणुशक्ति युग में युद्ध असंभव है। किसी को युद्ध का इच्छुक बताना बिल्कुल गलत है क्योंकि कोई भी देश युद्ध नहीं चाहता। यदि ये बातें ठीक हैं तो इस प्रकार की सैनिक सन्धियों का क्या मतलब है? किन्तु यह बात तर्कपूर्ण नहीं मालूम पड़ती। मैं किसी भूतकाल की घटना की आलोचना नहीं कर रहा हूं।

मैं आज की बात कर रहा हूं। अब उद्जन बम का उपयोग होने लगा है और इस से युद्ध का रवैया बिल्कुल बदल गया है। यह बात कोई विशेष महत्व नहीं रखती कि किसी एक देश के पास बहुत बम हैं और किसी दूसरे के पास बहुत कम हैं। महत्वपूर्ण बात तो यह है कि यदि कोई देश जिस के पास बहुत थोड़े बम हैं पर जो लड़ने को तैयार बैठा है वह अन्य देशों की बड़ी बरबादी कर सकता है। जब आप एक दूसरे को बरबाद करने के लिये तैयार बैठे हैं तो आप दूसरे को नाश करेंगे ही। इन बातों से बचाव का अन्य कोई उपाय नहीं है, सिवाय इस के कि युद्ध रोका जाय। केवल शस्त्रीकरण में कमी करने की बात से कोई लाभ नहीं होगा। यही बात सब से अधिक महत्वपूर्ण है।

दूसरे, आज के अणुशक्ति युग में सैनिक सन्धियों का क्या महत्व है? किसी देश के पास जो सेना है वह तो वैसी ही रहेगी। इस प्रकार की सैनिक सन्धियों का अभिप्राय

दूसरों को डराना है । शक्तिशाली गुट्ट अपने आस पास के छोटे छोटे देशों को धमकी देते हैं कि यदि तुम ने ऐसा किया तो हम तुम को मिटा देंगे; यदि तुम ने वैसा किया तो हम तुम को ठीक करने के लिये तैयार बैठे हैं । आज के युग में धमकी देने की बात ही सब कुछ समझी जाने लगी है । आप की धमकी का छोटे देशों पर, जिन के पास अणुबम नहीं हैं, प्रभाव पड़ सकता है पर जिन देशों के पास अणुबम हैं वह आप की धमकी से नहीं दबेंगे ।

आज संसार की स्थिति एक अस्थिर सन्तुलन पर पहुंच गई है । किसी भी आक्रमण से विश्व युद्ध हो जाने का डर है । चाहे यह आक्रमण किसी बड़े देश में हो या छोटे देश में, पर चूंकि उस से सन्तुलन भंग होगा अतः युद्ध अवश्य होगा । इसी कारण जेनेवा सम्मेलन में इंडोचीन के राज्यों के सम्बन्ध में काफी वादविवाद हुआ था । दोनों बड़े दल भयभीत थे कि यदि वह राज्य उन के विरोधी दलों में सम्मिलित हो जायेंगे तो उन को खतरा पैदा होगा । मान लीजिये कि लाउस और कम्बोडिया चीन के साथ मिल जाते हैं तो वह दूसरी तरफ के सभी देशों के भय का कारण बन जायेंगे और यदि ये दोनों देश चीन के विरोधी दल में मिल जायेंगे तो चीन अवश्य इस का विरोध करेगा । इस कठिनाई से कैसे बचा जाय ? या तो युद्ध के द्वारा यह निश्चय कर लिया जाय कि कौन सा देश अधिक शक्तिशाली है, या इंडोचीन के राज्यों को इन सैनिक सन्धियों के गठबन्धन से अलग रखा जाये ताकि दोनों पक्षों को यह सान्त्वना रहे कि इंडोचीन के राज्य उन के विरुद्ध नहीं हैं । इस कठिनाई से बचने का अन्य कोई उपाय नहीं है । क्योंकि दोनों दलों में से किसी के आगे बढ़ने से युद्ध अवश्य होता है इसलिये जेनेवा सम्मेलन में यह तय किया गया कि यदि इंडोचीन के राज्य इस प्रकार की सैनिक सन्धियों से अधिकतर दूर रहें, तो अच्छा है ।

ऊपर की बात से आप को पता चलेगा कि संघर्ष को बचाने का केवल यही उपाय है कि सभी बातों को उन के वास्तविक रूप में ही स्वीकार करना चाहिये । आप को युद्ध के द्वारा किसी चीज को बदलने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये क्योंकि युद्ध का परिणाम वह नहीं होता जो हमें अभीष्ट होता है, बल्कि उस से भी बहुत अधिक हानिकारक और भयंकर होता है । दूसरे, ऐसे देशों की संख्या बढ़ा कर भी युद्ध की संभावना कम की जा सकती है जो किसी दलबन्दी में न पड़ें और जो सभी दलों से मैत्री का व्यवहार रखें ।

सभा को विदित है कि भारत ने इस सम्बन्ध में गत वर्षों में एक निश्चित नीति का अनुसरण किया है । हमारी इस नीति की प्रशंसा बहुत से देशों ने की है और एशिया के बहुत से देशों ने भी इसी नीति को अपनाया है । जो देश इस नीति के पक्षपाती नहीं हैं, वे भी इस की प्रशंसा करते हैं । हम इस नीति का अनुसरण इसलिये नहीं कर रहे हैं कि इस से शक्ति का सन्तुलन बनेगा या हम किसी वर्ग मेंसम्मिलित हो जायेंगे बल्कि इसलिये कि हमें विश्वास है कि हमारी नीति ठीक और अच्छी है; औरचाहे संसार का अन्य कोई देश इसनीति को न माने पर हम उसे अवश्य मानेंगे । इस नीति के अनुसरण में हमारा विश्वास है और हमारी निष्ठा है । लोग इस की प्रशंसा करते हैं क्योंकि उन को भी इस नीति में विश्वास है और वह जानते हैं कि यह नीति वर्तमान के लिये ही नहीं बल्कि भविष्य के लिये भी कल्याणकारी सिद्ध होगी ।

सभा को विदित है कि एशिया के कुछ देश जैसे बर्मा और इंडोनेशिया आदि अन्त-

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

राष्ट्रीय मामलों में इसी नीति का अनुसरण कर रहे हैं । अभी हाल में यूगोस्लाविया के संघीय गणराज्य के राष्ट्रपति यहां आये थे और हम दोनों ने एक संयुक्त वक्तव्य दिया था जिस में पंचशील के पांच सिद्धान्तों का जिक्र किया गया था । इस से पता लगता है कि किस प्रकार हमारी नीति का प्रचार बढ़ रहा है । मैं इस सभा को विश्वास दिला सकता हूं कि आज बहुत सी सरकारें भले ही इस नीति से खुल्लमखुल्ला सहमत न हों, पर उन अनेक देशों की जनता का ध्यान इन की ओर आकर्षित हुआ है और लोग लगातार इस की ओर आकृष्ट हो रहे हैं ।

आज की दुनिया में कई प्रकार की विचारधारायें प्रचलित हैं । एक विचारधारा कड़ी कार्यवाही कों महत्व देती है । यह पुरानी प्रणाली है । उस समय यदि कोई छोटा राज्य ठीक आचरण नहीं करता था तों उस कों सेना भेज कर दबा दिया जाता था । यह सिद्धान्त तभी लागू होता है जब एक देश बलशाली और दूसरा कमजोर हो ; पर जब दोनों देश बराबर बलशाली होते हैं तों यह नीति असफल हो जाती है । एक दूसरी विचारधारा शक्ति के द्वारा समझौते पर विश्वास करती है। ठीक है, कमजोर की बात कोई नहीं सुनता । पर यदि एक देश समझौते के बल पर अपनी शक्ति बढ़ाता है तो उधर दूसरे देश भी ऐसा ही करते हैं; इस प्रकार शक्ति का सन्तुलन वैसा ही बना रहता है । कभी कभी स्थिति खराब भी हो जाती है ।

एक और विचारधारा पढ़े-लिखे भ्रम की है । इस विचारधारा के लोग अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के सम्बन्ध में बड़ी समझदारी की बातें करते हैं, उन की चर्चा करते हैं, भाषण करते हैं और लेख लिखते हैं पर वे अपनी भ्रमात्मक मानसिक स्थिति से कभी छुटकारा नहीं पाते । एक विचार धारा अज्ञानतापूर्ण भ्रम की है । इन विभिन्न विचार धाराओं के बीच यह पता लगाना जरा कठिन है कि हम क्या हैं और कहां हैं । विशेषतः जब समस्या एशिया से सम्बन्धित हो ; क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अधिकांश विचार धारायें यूरोप और अमेरिका की उपज हैं । वे बड़े देश हैं, किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उन्हें दूसरे देशों के सम्बन्ध में अधिक जानकारी हो ; दूसरे महाद्वीपों के बहुत से लोगों ने इस तथ्य को ग्रहण नहीं किया है कि एशिया बदल गया है, और तेजी से बदल रहा है । इसलिये विशेषतः एशिया के सम्बन्ध में बड़ी भ्रान्ति है ।

कदाचित् अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप के कुछ भागों में, निःसन्देह विश्व साम्यवादी तथा साम्यवाद-विरोधी दो शक्तिशाली गुटों में बंटा हुआ प्रतीत होता है, तथा वे इन दो बड़ी शक्तियों को एक दूसरे का विरोधी समझते हैं । वे इस बात को नहीं समझ सकते कि एक, दूसरे के मुक़ाबले में खड़ा भी हो सकता है । इसी से ज्ञात हो जाता है कि उन्हें एशिया के प्रति कितनी कम जानकारी है । मैं समस्त एशिया के प्रति नहीं कह रहा हूं क्योंकि यह एक बहुत विशाल महाद्वीप है । जहां कई प्रकार की विचारधारायें तथा कार्य-प्रणालियां प्रचलित हैं तथापि यह एशिया के कई देशों के प्रति लागू होता है ।

अब यदि हम भारत के सम्बन्ध में कहें तो, यहां के राजनैतिक तथा आर्थिक गठन के सम्बन्ध में हमारे विचार स्पष्ट हैं । हम इस संसद् तथा इस देश में संविधान के अधीन कार्य करते हैं, जिसे हम संसदीय प्रजातंत्र कह सकते हैं । हम ने इसे स्वीकार कर लिया है । यह हम पर थोपी नहीं गई है । हम इसे जारी रखना चाहते हैं, बदलना

नहीं चाहते । हम आर्थिक स्तर में भी इसी ढंग से कार्य करना चाहते हैं । मैं इस पहलू पर कुछ बातें बाद में कहूंगा । विरोधी पक्ष के प्रति पूरे आदर के साथ मै यह कहूंगा कि हम साम्यवादी नहीं बनना चाहते, किन्तु साथ ही हम दूसरी दिशा में घसीटे जाने की बात को भी पसन्द नहीं करते । हम किसी को हानि नहीं पहुंचाना चाहते । प्रत्येक देश को अपना मार्ग चुनने का अधिकार है । हम ने अपना मार्ग चुन लिया है तथा हम उस पर चलना चाहते हैं, जब आवश्यकता होगी तो हम उसे बदल सकते हैं, न कि किसी के कहने अथवा दबाव में आ कर और किसी देश से, जो सेनाबल अथवा किसी अन्य प्रकार से अपनी इच्छा हम पर लादना चाहता है, भयभीत नहीं होते ; तथापि हम अपने को आन्तरिक तथा दूसरे रूपों में शक्तिशाली बनाना चाहते हैं । साथ ही हम दूसरे देशों के साथ मित्रता चाहते हैं । इस प्रकार हमारे विचार तथा दृष्टिकोण साम्यवाद था साम्यवाद-विरोधी युद्ध से मेल नहीं खाते हैं । उन देशों के बहुत से लोग इस का कारण नहीं समझते हैं ; तथापि एशिया के बहुत से देशों को अनिवार्य रूप से इस नीति का अनुसरण करना है । जब हम अपने पैरों पर खड़े होने योग्य नहीं हैं तब यह दूसरी बात हो जाती है जब कोई देश अपने पैरों पर खड़े होने के योग्य नहीं होता तो वह अन्य देशों का आश्रय तथा सहारा ढूंढता है क्योंकि उसे आत्मविश्वास नहीं है । किन्तु ऐसा हो भी तो दुर्भाग्य की बात ही है ; इसलिये सहायता मांगते समय हम यह सोचते हैं कि कुछ देश मैत्रीपूण सहायता लेते हैं, जो हम भी लेने को प्रस्तुत हैं किन्तु कुछ देश इसलिये सहायता लेते हैं कि वे अपने पैरों पर खड़े नहीं हो सकते । यह सहायता सहायता नहीं कही जा सकती क्योंकि यह उस देश या व्यक्ति को दुर्बल बनाती है । इसलिये हम सदैव इस मामले में सतर्क रहते हैं कि हमारी नीतियां किसी प्रकार से प्रभावित तो नहीं हो रही हैं तथा सहायता के पीछे कोई शर्त तो नहीं लगी हैं । अपनी नीतियों का किसी प्रकार के बाह्य दबाव से प्रभावित होने से, हम बिना किसी प्रकार की सहायता के संघर्ष करना अच्छा समझते हैं ।

मैं अभी एशिया के उस परिवर्तन की ओर निर्देश कर रहा था जो कई रूप धारण कर रहा है । अभी लगभग सात सप्ताह के उपरान्त बांडुंग में, इंडोनेशिया स्थित बांडुंग में एक एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन होने वाला है, जहां एशिया तथा अफ्रीका के स्वतंत्र देशों को निमंत्रित किया गया है । जहां तक मैं जानता हूं प्रत्येक निमंत्रित देश के वहां उपस्थित होने की संभावना है । यद्यपि मैं बिल्कुल निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता तथापि मेरे विचार से वे सभी देश उपस्थित होंगे । यह सम्मेलन, यथार्थ में, क्या करने वाला है, मैं यह भी नहीं कह सकता । उस का कार्यक्रम बनाना, मेरे तथा इसे प्रारम्भ करने वाले देशों के हाथ में भी नहीं है । इस का निश्चय सम्मेलन ही करेगा किन्तु मुझे यह जान कर कुछ आश्चर्य ही हुआ है कि माननीय सदस्य श्री अशोक मेहता ने इस सम्मेलन के सम्बन्ध में पददलित देशों को मुक्त करने के लिये एक विशाल कार्यक्रम बनाने को कहा है । हम सभी पद-दलित देशों को मुक्त करना चाहते हैं । इस में कोई सन्देह नहीं है, किन्तु इस प्रकार के कार्यक्रम से हम सम्मेलन को सम्बन्धित करना—इस सम्मेलन के प्रयोजन को गलत समझना है—क्या हम वहां एक आन्दोलन चलाना चाहते हैं ? सभा को ज्ञात होगा कि सम्मेलन सरकारी स्तर पर होने वाला है । वहां सरकारें प्रतिनिधित्व करेंगी । वास्तव में, प्रधानमंत्रियों का प्रतिनिधित्व किया

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

जायेगा । सम्मेलन में विभिन्न राजनैतिक तथा आर्थिक गठन वाले तथा नितान्त भिन्न आदर्श वाले देश हैं । इस सम्मेलन में ऐसे देश हैं जो एक अथवा दूसरे शक्तिशाली गुट के साथ हैं ; तथा भारत, बर्मा, इंडोनेशिया, इत्यादि ऐसे भी देश हैं जो किसी गुट के साथ नहीं हैं । इसलिये वहां एशिया और अफ्रीका के देशों का एक अद्भुत समायोजन होगा । वे देश कई बातों में, एक दूसरे समान हैं और कई बातों में असमान भी हैं । यह एक विचित्र सम्मेलन होगा । किन्तु केवल सम्मेलन की ही बहुत बड़ी सार्थकता है । ऐसा सम्मेलन प्रथम बार ही हो रहा है । जो अप्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न रूप से यह प्रगट करता है कि एशिया तथा अफ्रीका अग्रस्थान ग्रहण कर रहे हैं । मैं नहीं जानता कि यह विचार इस सम्मेलन के मूल उद्भावक के मन में भी था अथवा नहीं, लेकिन यह प्रस्ताव समय की भावना के अनुसार उपयुक्त समय पर किया गया तथा इस प्रकार इस सम्मेलन का बहुत बड़ा महत्व है ।

यह प्रगट है कि इस प्रकार का सम्मेलन वहां के प्रतिनिधि देशों के बीच के विवादपूर्ण प्रश्नों पर चर्चा नहीं कर सकता है । मेरा मत है कि यह सम्मेलन इस प्रकार का कोई कार्य नहीं करेगा जिस से कि कोई दूसरों के प्रति एक विरोधी गुट खड़ा करे । यदि मैं इस शब्द का प्रयोग करूं तो यह अनिवार्य रूप से एशिया तथा अफ़्रीका के देशों के, जिन में से कुछ शक्तिशाली गुटों के इस ओर और कुछ उस ओर झुके हुए हैं, सहअस्तित्व के सम्बन्ध में एक मैत्रीपूर्ण सम्मेलन है, जिस में यह पता लगाने का प्रयत्न किया जायेगा कि आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में भी कौन सा आधार सामान्य कहा जा सकता है ? इस प्रकार इसे केवल एशिया के ही दृष्टिकोण से नहीं, प्रत्युत संसार के दृष्टिकोण से बहुत महत्व की प्रगति कहा जा सकता है । श्रीमती रेणु चक्रवर्ती ने प्रजातंत्र पर मेरी पुस्तकों के कुछ विस्तृत उद्धरण ले कर मुझे सम्मानित किया है । मैं ने वह उद्धरण देखा है तथा मोटे तौर से मैं २२ वर्ष पूर्व लिखी गई बात से सहमत हूं, यद्यपि तब से मेरे विचारों में पर्याप्त विकास हो चुका है । मैं अपने कहे हुए को दोहराता हूं कि यदि प्रजातंत्र केवल राजनैतिक प्रजातंत्र तक ही सीमित रहता है और आर्थिक प्रजातंत्र तक विस्तृत नहीं होता तो वह पूर्ण प्रजातंत्र नहीं कहा जा सकता । बहुत से लोग राजनैतिक प्रजातंत्र के आवरण के भीतर अपने को छिपा कर अन्य प्रकार की प्रगति को रोकते हैं । यह नितान्त सत्य है कि मैं ने ऐसा कहा है किन्तु हाल के वर्षों में कुछ नई तथा अपूर्व बातें हुई हैं यहां तक कि राजनैतिक प्रजातंत्र के सम्बन्ध में भी विभिन्न देशों में वयस्क मताधिकार का प्रारम्भ, पश्चिम में भी बिल्कुल नई चीज है । इस प्रकार यह तर्क कि प्रतिबन्धित प्रजातंत्र निहित हितों के पक्ष में रहता है यद्यपि बिल्कुल ठीक है तथापि यह वयस्क मताधिकार वाले देश में उस सीमा तक लागू नहीं होता जिस सीमा तक इस के लागू होने का ज़िक्र आया है ।

वास्तव में, हमें जिस समस्या का सामना करना है वह यह है कि आर्थिक क्षेत्र में हम जो परिवर्तन करना चाहते हैं वह प्रजातंत्रात्मक पद्धति से, शान्तिपूर्ण रीति से हो सकते हैं अथवा नहीं । सामान्य रूप से यदि राजनैतिक स्तर में प्रजातंत्र ठीक रूप से नहीं कार्य कर पा रहा तो दबाव डालने, हिंसा तथा हिंसापूर्ण क्रांति के सिवा परिवर्तन करने का और कोई उपाय नहीं है । किन्तु जहां शांति पूर्ण उपाय उपलब्ध हो तथा वयस्क मताधिकार हो, वहां हिंसा से परिवर्तन

करने का प्रश्न न केवल निरर्थक है प्रत्युत बिल्कुल गलत है; क्योंकि उस का तात्पर्य यह है कि अल्प संख्यक बहु संख्यकों के ऊपर इसलिये हिंसापूर्वक अपनी इच्छा थोप रहे हैं कि वे सामान्य पद्धति से तर्कों द्वारा उनका मत परिवर्तन करने में असफल हो चुके हैं। निस्सन्देह यह कोई राजनैतिक अथवा आर्थिक प्रजातंत्र नहीं है। इसलिये समस्या यह है कि हम अपने राजनैतिक प्रजातंत्र को आर्थिक क्षेत्र में विस्तृत करें।

कदाचित् अशोक मेहता ने मुझ से यह प्रश्न पूछा है कि मेरे समाज के समाजवादी गठन कहने से क्या तात्पर्य है। उन्हीं के सहयोगी श्री नरेन्द्र देव ने यह प्रश्न जनता में पूछा है। उन्हें यह प्रश्न पूछने का पूरा अधिकार है किन्तु मैं नहीं जानता कि वह मुझ से औपचारिक विशेष अथवा विस्तृत--किस प्रकार के उत्तर की अपेक्षा करते हैं। मैं उन्हें विस्तृत उत्तर नहीं दे सकता। यदि वह चाहते हैं कि हमारा उद्देश्य क्या है तो यह दूसरी बात है। निःसन्देह हम ने लोक कल्याण राज्य कहा है; किन्तु मैं एक कदम आगे बढ़ कर कहता हूं कि हम समानतावादी समाज चाहते हैं जिसका तात्पर्य एक ऐसा समाज है जहां जनता के बीच आर्थिक तथा अन्य अवसरों की समानता होती है। यह मोटे रूप से साधारणीकरण है। इन बातों को हर कोई कह सकता है; मैं इस कारण कहता हूं कि हमें अपनी आंखों के सामने एक चित्र रखना पड़ता है तथा जैसा कि विरोधी पक्ष के माननीय सदस्यगण कभी कभी करते हैं--कि एक नारा लगा कर उन्हों ने बहादुरी का कार्य कर दिखाया है अथवा कुछ पुरानी घिसी-पिटी कहावतें कह कर समाज बदल दिया है--ऐसा करना भयानक है।

**श्री एस० एस० मोरे** : आप क्या कदम उठा रहे हैं ?

**श्री जवाहरलाल नेहरु** : पहिला कदम यह है कि हम यथार्थता से सोचें तथा नारों से बन्धे हुए न रहें। यह महत्वपूर्ण है। टेकनौलोजी में असाधारण विकास हो जाने के कारण उत्पादन वितरण इत्यादि सभी बदल गया है। इसके फलस्वरूप आर्थिक सिद्धान्त समाप्त नहीं होते प्रत्युत नये दृष्टिकोणों का संकेत मिलता है। मेरे विचार से अणु युग में आर्थिक विचारों को हमें नया रूप देना पड़ेगा मेरा यह अभिप्राय नहीं कि प्राचीन काल के विचारकों के प्रति कम सम्मान हो। हमें उन के शब्दों से अवश्य लाभ उठाना चाहिये। किन्तु उन को उन के मूलरूप से वर्तमान युग में प्रयुक्त करना विचार तथा निर्णय की कमी है। यही अन्तिम चित्र महत्व पूर्ण है क्योंकि हमें यह जानना है कि हम आखिर किधर को जा रहे हैं; फिर भी हमारा यही उद्देश्य है कि सम्पत्ति बढ़ाने में द्रुत वेग से काम लिया जाय तथा बढ़ती हुई बेकारी को कम कर दिया जाय। विरोधी दल के माननीय सदस्य बहुत छोटी छोटी बातों से सन्तुष्ट हो जाते हैं ..... (**अन्तर्बाधाएं**)। अब उन के पास कोई अधिक महत्व की बात नहीं है ......(**अन्तर्बाधा**)।

यह स्पष्ट है कि आप चाहे जो प्रक्रिया या ढंग अपनायें, देश में पूर्ण रोज़गार प्राप्त करने तक आप को उत्पादन में वृद्धि करनी है और रोज़गार बढ़ाना है। अतः हमें इस बात पर विचार करना चाहिये कि पर्याप्तरूप में हम यह कार्य किसप्रकार कर सकते हैं। इस पर विचार आरम्भ करने के पूर्व आपको इस के लिये सूचना और संख्यकी प्राप्त करनी है। हम योजना बनाने की चर्चा करते हैं। मेरा ख्याल है कि वास्तव में यह एक अच्छी बात है, परन्तु स्वयं योजना भी तो केवल विचार करने से और बिना सांख्यकी के नहीं बनाई जा सकती। जब भी आप कोई योजना बनाते हैं, आप पांच वा दस वर्ष पूर्व एक चित्र बनाते हैं। उस समय आप को यह जानना होता है कि तब आप का उत्पादन,

[श्री जवाहरलाल नेहरु]

उपभोग प्रति व्यक्ति क्या होगा और लोग कितने खाद्यान्न का उपभोग करेंगे, आप का स्तर कितना ऊंचा होगा ; आदि, आदि । इस सब की गणना करनी होती है और इस सब के लिये व्यवस्था करनी पड़ती है । अतः यदि कोई पूछता है कि 'अपने समाजवाद की व्याख्या करो', तो मैं एक दूरदर्शी चित्र खींच सकता हूं जो मेरे विचार में है और जिस में समाज प्रसन्न होगा, प्रत्येक व्यक्ति को अवसर मिलेगा और कोई भी व्यक्ति अन्य व्यक्ति पर दबाव नहीं डालेगा, आदि, आदि । परन्तु इतना कहने से काम नहीं चलता । प्रश्न यह है कि वर्तमान परिस्थितियों में हमें इस देश में अपने धन में वृद्धि करनी है । हमें यह देखना है कि इस देश में वितरण समानता के साथ हो और असमानता समाप्त हो, और अन्त में हमारा एक ऐसा समाज हो जहां समानता हो । मुझे इस में सन्देह है कि उस समाज की स्थापना मेरे जीवन-काल में हो जायेगी । हमें इस बारे में स्पष्ट होना चाहिये । यह प्रत्यक्ष है कि आप इस देश के ३६ करोड़ लोगों में जादू से एकदम परिवर्तन नहीं कर सकते । किसी भी देश में ऐसा करने में बहुत समय लगता है । परन्तु हम तीव्रता से आगे बढ़ सकते हैं और चाहे कुछ हो बहुत सी उन बुराइयों और अन्तरों को जो आज विद्यमान हैं, समाप्त कर सकते हैं । आप अब जितनी तीव्रता से आगे बढ़ेंगे, उस से अधिक तीव्र गति से आप बाद में आगे बढ़ सकेंगे ।

अतः, उस चित्र को भली प्रकार समझते हुए, जिसे मैं समाजवादी रूप समझता हूं, इन समस्याओं का समाधान अधिक उत्पादन और अधिक रोजगार के साधन उत्पन्न कर के ढूंढा जाना चाहिये । अतः यह स्पष्ट है कि यदि हम समाजवाद के रूप में विचार करते हैं, तो हमें उत्पादन के बड़े बड़े साधनों पर अधिक सामाजिक नियंत्रण लगाना चाहिये । वैसे राज्य में मैं स्पष्ट रूप से कहता हूं—हम भूमि को सरकारी क्षेत्र नहीं बना रहे हैं । भूमि गैर सरकारी क्षेत्र रहती है । हम सहकारी प्रयत्न के रूप में विचार कर रहे हैं ।

अनेकों कार्यवाहियों के सम्बन्ध में गैर-सरकारी क्षेत्र को पूर्ण रूप से भाग लेना होगा, परन्तु इस में सन्देह नहीं कि सरकारी क्षेत्र—जो वास्तव में सामाजिक आधिपत्य में होगा—अधिकाधिक महत्वपूर्ण होता जायेगा और इस की प्रभुत्वकारी स्थिति होगी और इस का लगभग देश की अर्थ-व्यवस्था पर नियंत्रण होगा । यह प्रक्रिया जारी रहेगी । मेरा ख्याल है कि इतिहास में कोई भी ऐसा उदाहरण नहीं है जहां किसी भी देश में इस प्रकार का प्रयोग किया गया हो । हम ने देखा है कि अन्य देशों में क्या हुआ है । यहां उस प्रक्रिया का उलटा है जिस के द्वारा पश्चिमी देशों ने औद्योगिक तथा आर्थिक प्रगति की है । आरम्भ करने के लिये हम ने उच्चतम प्रकार का राज नीतिक जनतंत्रवाद प्राप्त किया है और अब हमें उस के अधीन अपनी अर्थ-व्यवस्था बनानी है । यह स्मरण रखिये कि यह प्रक्रिया उस प्रक्रिया के बिल्कुल उलटी है जो पश्चिमी देशों में १०० या १५० वर्षों तक होती रही है । अतः हम इस समस्या का एक श्रेष्ठ रूप में सामना कर रहे हैं और हम आर्थिक प्रगति प्राप्त करना चाहते हैं और वह इन जनतंत्रात्मक और शान्तिपूर्ण ढंगों से । मुझे विश्वास है कि हम ऐसा कर सकते हैं । मुझे इस का विश्वास किसी सैद्धान्तिक तर्क के कारण नहीं है अपितु मुझे भारतीय लोगों पर विश्वास है ; मुझे उन पर गर्व है । फिर भी, यह एक बहुत बड़ी बात है, और हमारे लिये यही एक साधन है कि

हम इस प्रश्न पर व्यापारी की भान्ति समाधान करें, और ऐसा करने में उस चित्र का ध्यान रखें। इस के अतिरिक्त, हमें अपने विचारों और क्रियाओं का आधार तथ्य, सांख्यकी और विज्ञान बनाना होगा।

**अध्यक्ष महोदय** : मेरा ख्याल है कि संशोधन संख्या १ और २७ एक साथ मतदान के लिये प्रस्तुत होने हैं।

माननीय सदस्यों को विदित है कि संशोधनों में कुछ परिवर्तन हो गये हैं। और अब दोनों संशोधन एक हो गये हैं।

अध्यक्ष महोदय द्वारा प्रस्ताव मतदान के लिये रखा गया तथा अस्वीकृत हुआ।

**अध्यक्ष महोदय** : मैं समझता हूं कि अब हमें और कोई संशोधन मतदान के लिये प्रस्तुत नहीं करना है। क्या मैं मूल प्रस्ताव को सभा के मतदान के लिये प्रस्तुत कर सकता हूं।

**श्री वी० जी० देशपांडे** : हम चाहते हैं कि संशोधन संख्या २२ और २४ सभा के मतदान के लिये पृथक् पृथक् रूप से प्रस्तुत किये जायें।

अध्यक्ष महोदय द्वारा संशोधन संख्या २२ और २४ मतदान के लिये पृथक पृथक रूप में रखे गये तथा अस्वीकृत हुए।

**अध्यक्ष महोदय** : अब मैं मूल प्रस्ताव को मतदान के लिये सभा में रखूंगा।

प्रश्न यह है :—

"कि इस सैशन में समवेत लोक-सभा के सदस्य राष्ट्रपति के उस अभिभाषण के लिये अत्यन्त आभारी हैं जो उन्हों ने २१ फरवरी, १९५५ को एक साथ समवेत संसद् के दोनों सदनों के सामने देने की कृपा की है।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

इस के पश्चात लोक-सभा सोमवार, २८ फरवरी, १९५५ के ग्यारह बजे तक के लिये स्थगित हुई।

---

GIPND—HS—662 LSD—2-8-55—000